रेने देकार्त- द्वैतवाद (Dualism)

TDC-II

डॉ. विजय कुमार
दर्शनशास्त्र विभाग
एल. एस. कॉलेज, मुजफ्फरपुर

देकार्त का द्रव्य स्वतंत्र, निरपेक्ष तथा स्वरचित है। उनके अनुसार पदार्थ या द्रव्य वह है, जिसकी अपनी निजी सत्ता हो और जो अपनी सत्ता के लिए किसी अन्य वस्तुओं पर निर्भर न हो। अत: देकार्त के कथनानुसार ऐसा द्रव्य जो स्वतंत्र तथा आत्मनिर्भर हो वह केवल ईश्वर है। क्योंकि ईश्वर ही एकमात्र ऐसी सत्ता है जो अपने अस्तित्व के लिए किसी भी अन्य वस्तु पर निर्भर नहीं है। परन्तु प्रश्न उपस्थित होता है कि आत्मा और ईश्वर की सत्यता के अतिरिक्त जो हमें विभिन्न प्रकार की अनुभूतियाँ होती हैं उनकी सत्यता का आधार या कारण क्या है? जैसे- रंग, गंध, स्वाद, सुख-दु:ख आदि। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि सुख-दु:ख आदि का अनुभव आत्मा को होता है परन्तु स्वयं आत्मा इसका कारण नहीं हो सकती। जहाँ तक ईश्वर की बात है तो वह पूर्ण, दयालु एवं सत्यप्रिय है, वह भी इसका कारण नहीं हो सकता, क्योंकि वह अपने जीव को मिथ्या ज्ञान नहीं दे सकता। अत: स्पष्ट है कि आत्मा और ईश्वर के अतिरिक्त भी कोई सत्ता है, जो इन अनुभूतियों का कारण है, वह है बाह्य जगत्।

देकार्त ने दो प्रकार के द्रव्यों की कल्पना की- **निरपेक्ष द्रव्य** और **सापेक्ष द्रव्य**। निरपेक्ष के अनतर्गत एक मात्र ईश्वर की सत्ता आती है और सापेक्ष द्रव्य के अन्तर्गत बाह्य जगत्। देकार्त ने पुन: सापेक्ष द्रव्य को दो भागों में विभाजित किया है- चित् और अचित्। इस तरह देकार्त के अनुसार द्रव्य के तीन प्रकार होते हैं-

१. निरपेक्ष द्रव्य (Absolute Substance)
२. चेतन द्रव्य (Thinking Substance)
३. अचित् अर्थात् विस्तृत द्रव्य (Extended Substance)

जिस प्रकार देकार्त ने निरपेक्ष द्रव्य की स्वतंत्र सत्ता स्वीकार किया है उसी प्रकार चित् और अचित् अर्थात् चेतन और जड़ की भी स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार किया है। दोनों के गुण एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न है। जड़

का मौलिक गुण है विस्तार (Extention) और चेतन तत्त्व अर्थात् आत्मा का मौलिक गुण है विचार (Cognition)। जो परस्पर एक-दूसरे के विरोधी हैं। इसीलिए देकार्त के दर्शन को द्वैत की संज्ञा दी गई है। जड़ जो दिक् (Space) को घेरता है। जबकि चेतन द्रव्य आत्मा को दिक् (Space) की जरूरत नहीं पड़ती। जड़ पदार्थ दिखाई देता है, जबकि चेतनशील पदार्थ सूक्ष्म होने के कारण दिखाई नहीं देता। देकार्त ने अणु की सत्यता को स्वीकार नहीं किया है। उनके अनुसार अणु विभाज्य है जबकि आत्मा अविभाज्य है, क्योंकि वह विस्तारशून्य है। शरीर जो भौतिक पदार्थ है, यन्त्रवत है या यन्त्रस्वरूप है। अब समस्या आती है कि यदि चित् यानी आत्मा तथा अचित् यानी शरीर, जो भौतिक है परस्पर एक-दूसरे से भिन्न हैं, स्वतंत्र है तो उनका संयोग कैसे होता है? क्योंकि हमें व्यावहारिक जीवन में उनके संयोग की विभिन्न अनुभूतियाँ होती हैं। यथा जब शरीर पर आघात होता है, तो उसका प्रभाव मन पर पड़ता है और हम अचेतन हो जाते हैं तब हमारा शरीर निष्क्रिय हो जाता है। जो हमें यह मानने पर बाध्य करता है कि मन और शरीर में कोई आन्तरिक सम्बन्ध है।

उपर्युक्त समस्या के लिए के समाधान के लिए देकार्ते ने किया-प्रतिक्रियावाद अथवा अन्योन्य-क्रियावाद (Theory of Inter-actionism) का सहारा लिया है। उनके अनुसार मन और शरीर के बीच क्रिया-प्रतिक्रिया का सम्बन्ध है। इसे स्पष्ट करने के लिए देकार्त ने घोड़े और घुड़सवार का उदाहरण प्रस्तुत किया है। जब घोड़ा दौड़ता है तब घुड़सवार के शरीर में क्रिया उत्पन्न होती है। ठीक इसी प्रकार मन के निर्देश पर शारीरिक क्रिया होती है और मन प्रभावित होता है। यदि मन में इच्छा होती है कि लेखन कार्य करें तो हाथ सक्रिय हो जाते हैं, हमारी शारीरिक-क्रिया प्रारम्भ हो जाती है और वह शारीरिक-क्रिया मन को प्रभावित करती है।

देकार्त ने यह तो स्पष्ट कर दिया कि मन और शरीर के बीच क्रिया-प्रतिक्रिया होती है। परन्तु स्वभावत: यह प्रश्न सामने आ खड़ा होता है कि वो कौन-सा केन्द्रबिन्दु है जहाँ पर मन और शरीर का मिलन होता है और जहाँ से एक-दूसरे के बीच परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया होती है। देकार्त ने कहा हमारे मस्तिष्क के अग्र भाग के बीच में एक ग्रन्थि है जिसे पीनियल ग्रन्थि (Pineal Gland) कहते हैं। इस ग्रन्थि के सहारे ही मन तथा शरीर एक-दूसरे पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं। यह ग्रन्थि ही चित् और अचित् अर्थात् जीव और शरीर की मिलन शय्या है। इसे देकार्त का चिदाचित्संयोगवाद कह सकते हैं।

●